International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 10-06-2023, Accepted: 26-06-2023, Published: 12-07-2023
Volume 9, Issue 4, 2023, Page No. 7-10

निर्मला पुतुल की कविताओं में आदिवासी स्त्री अस्मिता

अनीष कुमार साकेत[1], डॉ. निरपत प्रसाद प्रजापति[2]
[1] शोधार्थी, हिंदी विभाग, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय रीवा, मध्यप्रदेश, भारत
[2] शोध निर्देशक, सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग, शास. स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बैढ़न, सिंगरौली, मध्यप्रदेश, भारत

सारांश
निर्मला पुतुल की कविताएँ समकालीन कविता लेखन में विशिष्ट हैं. 'नगाड़े की तरह बजते शब्द' और 'बेघर सपने' नामक उनके दो कविता संग्रहों में उनकी आदिवासी अस्मिता स्पष्ट है। इसमें आदिवासी स्त्री की भावना व्यक्त होती हैस उन्हें आदिवासी होने की पीड़ा और स्त्री होने की पीड़ा दोहराती दिखती है. उनकी कविताएँ आज की सच्चाई को उजागर करती हैं। निर्मला पुतुल की कविताएँ, भूमंडलीकरण और पश्चिमीकरण के इस दौर में स्त्री आदिवासी होने की व्यथा को नया स्वर देती हैं। पुरुष हो या स्त्री, आदिवासी समाज का व्यक्ति सभ्य समाज के मूल्यों को नकारता दिखता है। उनके कई प्रश्नों का उत्तर देने के लिए भी उन्हें प्रतिबद्ध होना पड़ता है। निर्मला ने अपनी सुंदर अभिव्यक्ति के माध्यम से आदिवासी जीवन को समझाया है। यही कारण है कि उनकी कविताओं में आदिवासी जीवन का भावपूर्ण चित्रण मिलता है।

मूल शब्दः अस्मिता, मशीनीकरण, आदिवासी समाज, प्रतिबंध, उन्मुक्त, विद्रोह, रूढ़िवादियों, विरोध, दंडनीय, प्रस्ताव, आदिवासी स्त्री, भूमंडलीकरण और पश्चिमीकरण

वैश्वीकरण के वर्तमान युग में, सभ्यता में मशीनीकरण का स्तर अत्यधिक उन्नत है, लेकिन आदिवासी समाज का एक तबका आज भी शक्ति, सामर्थ्य और लोकमान्यताओं के कारण पिछड़ा दिखाई देता है, जबकि इन्हीं लोकमान्यताओं ने इसे बल दिया हैस लोगों ने उनकी सहजता और सरलता का फायदा उठाया और अपने जीवन की संवेदनशील परतों को खोलास आदिवासी स्त्रियाँ, एक स्त्री के रूप में, अपने ही घर में दोयम दर्जे का व्यवहार सहने को विवश हैं। उन्हें न सिर्फ लोकव्यवहार के कारण बल्कि अपनी स्त्री होने के कारण भी दंडित करना पड़ा है। उन्हें अपनी अस्मिता विद्रोही बनाती है, यह विद्रोह कहीं 'बाहामुनी' तो कहीं 'सजोनी किस्कू' के रूप में सामने आता है। आदिवासी महिलाएं मार दी जाती हैं या बेच दी जाती हैं, वह अपना स्थान खोजती है। वह इसे करते हुए बेचैन हो जाती है। वह अपनी पहचान खोजने में लगी रहती है, "मैं स्वयं को अपनी जाति से देखना चाहती हूँ/मुक्त होना चाहती हूँ अपनी जाति से/क्या है सिर्फ एक स्वप्न/स्त्री के लिए–घर संतान और प्रेम?" कवित्री अपनी अंतरात्मा तलाशते हुए स्त्री कविता में कहती हैंस क्या एक ओर स्त्री होने की गहरी पीड़ा दिखाई देती है, वहीं दूसरी ओर अपनी पहचान का दर्द दिखाई देता है? वह एक मुक्त आकाश की मांग करती है जो शब्द से परे हो, और उसके होने का आभास होस वह अपनी उपस्थिति दर्ज करने के लिए व्यग्र मानों को दिखाती है, उसके भीतर अपनी अस्मिता का अहसास हैस अपनी कविताओं में वह कहती है कि औरत सब कुछ सहती है, लेकिन विद्रोह नहीं करती क्योंकि विद्रोह करना उसके संस्कारों में नहीं हैस वह कहती हैं कि उसे एक ही जीवन में कई बार जन्म लेना और मरना पड़ता है क्योंकि "आँसू पीती है/घूँट–घूँटकर जीती है/मोम–सी पिघलती है/कछ नहीं कहती/रोज जन्मती मरती है।" वह अपने होठों को सीती चलती है क्योंकि वह मर्दों की बनाई दुनिया में स्वयं को उसकी धाती मानती है, आज स्त्रियां इस विचार से दूर हैं। आज वह विरोधी दिखती है, वह आदिवासी करुँगी जहाँ घर की बकरियाँ बेचनी पड़ेस जहाँ कोई जंगल, नदी या पहाड़ नहीं है, वहाँ बहुत से मोटरगाड़ियों और बड़े–बड़े स्टोर नहीं हैंस जहाँ मुर्गे की बाँग पर सुबह नहीं होती, वहाँ खुला आँगन नहीं होता, मेरा वर खराब होने पर बदल नहीं सकता, इसलिए ऐसा वर नहीं चुनना जो दिन–रात पोचई और हड़िया में डूबा रहता है। वह यह भी कहती है कि मैं किसी ऐसे व्यक्ति के हाथ में हाथ नहीं देना चाहती जो कभी पेड़ नहीं लगाया, फसलें नहीं उगाई या किसी का बोझ नहीं उठाया है। वह अपने पिता से वहाँ ब्याहने की बात करती है जहाँ वे सुबह जाते हैं और शाम को वापस आते हैं, साथ ही वह चाहती है कि उसका विवाह एक ऐसे स्थान पर हो, जहाँ ईश्वर नहीं आदमी रहते हैं, "उस देश में विवाह करना/जहाँ ईश्वर कम आदमी रहते हैं/बकरी और शेर/एक घाट पानी पीते हैं।

निर्मला पुतुल जी ने व्यंग्य से आदिवासी लड़की का परिचय देते हुए कहा कि वह सबल और शांत है, ऊपर से काली पर चमकते दाँतों की तरह जूड़े में हरी–पीली पत्तियाँ डालकर मॉदल की थाप पर नृत्य करती हैं। उनका गीत संगीत से गहरा संबंध है, यह आदिवासी स्त्री की ऐसी व्याख्या को प्रस्तुत करने वाले उनकी ही जमात के खाये–पिये आदमी हैं, जो अपने शब्दों के धोखे से आदिवासी स्त्री का इतना सरस चित्रण करते हैं। इस चित्र से अलग आदिवासी लड़की जीवन की कठोर गर्मी में तपकर अपने जीवन का निर्वाह करती है। आदिवासी स्त्री को अपने पिता और माँ दोनों की चिंता है, इसलिए वह शादी करने से पहले कुछ कहती है। "सोचती हूँ/कौन अब तुम्हारे पाँव दबाएगा?" कौन थके–माँदे वापस लौटे बापू को मदद करेगा? कौन लाएगा जंगल से बीन कर लकड़ियाँ, कौन देगा थके–माँदे वापस लौटे बापू को एक लोटा भर पानी? गायों को चराने का काम कौन करेगा? कवित्री अपनी माँ को बहुत प्यार करती है। माँ की अनवरत सेवा का समाज की दृष्टि में मूल्यांकन नहीं हो सकता, लेकिन उसके समर्पण का मूल्यांकन नहीं हो सकता, वह स्वस्थ रहती हैस उसे घड़ी चलने या रूकने से कोई फर्क नहीं पड़ता, उसे बस दिन में जगते हुए और रात में सोते हुए भी निरंतर काम करना हैस वह अपनी बेटी की तरह कहती है कि वह इसी तरह डरती है, माँ, अपनी बेटी के लिए कुछ करने में असमर्थ होने पर माँ अपराधवोध से भर जाती है। निर्मला पुतुल जी ने अपनी कविताओं में भी इस अपराधवोध को व्यक्त किया है। वे अपनी कविता "मैं मेरा दुःख और समुद्र" में सम्बन्ध बताती हैं कि वह सिर्फ दुखी नहीं है, बल्कि उसके साथ अथाह जल वाला

समुद्र भी दुखी हैस दुखों का पहाड़ इतना बड़ा है कि समुद्र के जल में भी उसे सोखने की क्षात नहीं रह गई है। अतः उसे पता चलता है कि इस दुनिया में एकमात्र व्यक्ति नहीं दुखी है; हर व्यक्ति दुखी हैस तब मैंने सोचा कि मैं अकेली नहीं हूँ जो दुखी हूँ, बल्कि हर आदमी के दुख हैं जो सुख की तलाश में अपने दुखों को मुट्ठियों में छिपा रहे हैं। स्त्री अपने जीवन में इस तरह का दर्द सहती रहती है कि वह ईश्वर से प्रार्थना करती है कि वह अगले जन्म में स्त्री नहीं होना चाहती, लेकिन वह चाहती है कि सभी पुरुष अगले जन्म में पुरुष बनकर पैदा हों, लेकिन उनकी प्रार्थना ईश्वर के दरबार में भी ठुकरा दी गई क्योंकि वहाँ ईश्वर (पुरुष) ने कहा कि जो स्त्रियाँ पहले जन्म में स्त्री बनकर पैदा हुईं, वे अगले जन्म में भी इसी तरह की पीड़ा सहती रहेंगी, पता चला ईश्वर की सभा ने यह प्रस्ताव पारित किया है, यही कारण है कि वह विद्रोह की धमकी देती है। उसे अपना घर और अपनी पहचान खोजने की जरूरत महसूस होती है, यही कारण है कि वह कहती है कि मेरे पति नहीं, मेरे घर के बाहर नेमप्लेट है। मैं खुद के अंदर एक घर की तलाश में हूँ, वह जन्म से विस्तर तक अपना घर नहीं पाती। वह कहती है, "धरती के इस छोर से उस छोर तक/ मुट्ठीभर सवाल लिये मैं दौड़ती–हाँफती–भागती/तलाश रही हूँ", "अपना घर" या "अपनी जमीन" शब्द का प्रयोग सदियों से रहा है। वह एक अलग अस्तित्व मानने को हमारा समाज तैयार नहीं हैस यही कारण है कि वह अपनी असली स्थिति को समझना चाहती है। वह चाहती है कि लोग भी उसके भोगे हुए यथार्थ को जानें, पुरुष पीठ थपथपाकर हाथों से उसकी मांसलता नापने लगता है और अपने होंठों की पपड़ी को भूलकर उसकी उभरी छाती पर ही ध्यान देता है। वह अपने कर्मरत जीवन को छोड़ देता है, यही कारण है कि वह उस आदमी को विचार करने को मजबूर करती है थोड़ी देर सोचो, पर विचार करो, कवित्री न सिर्फ अपने पिता–माता, ईश्वर, समाज और पुरुष वर्ग से सवाल करती है,बल्कि आप जानते हैं कि स्त्री की कर्मठता को उसकी सरलता और सुविधा को कम नहीं करना चाहिए? वह कविता में एक अलग स्त्री से प्रश्न करती हैस वह जाति और प्रेम से अलग स्त्री की सत्ता पर भी प्रश्न उठती है, वह एक साथ रहती है और अलग रहती है, अपने ही लोगों से लड़ती है, पूछती है कि आप जानते हैं। एक स्त्री के पूरे संबंध को परिभाषित कर सकते हैं, आप एक स्त्री को स्त्रीदृष्टि से देख सकते हैं उसका स्त्रीत्व क्या है? निर्मला पुतुल जी की कविता स्त्री के रूप में स्त्री होने के सत्य से ओतप्रोत हैस अपनी कविता में पुतुल ने अपने आसपास के लोगों को भी प्रमुख चरित्र बनाया हैस बाहामुनी, सजोनी किस्कू चुड़का सोरेन जैसे पात्रों को रगड़ कर स्त्री जीवन के सत्यों को व्यक्त करती है। वह बाहामुनी के माध्यम से चटाई बुनने वाली महिला के कर्मरत सौन्दर्य की प्रशंसा करते हुए कहती है, "चटाई बुनते वक्त आप जमीन पर बैठे रहते हैं और पंखा बनाते हुए आपके काले शरीर से टप–टप पसीना टपकता हैस" दातुन करना, जीवन की एक और विडम्बना है कि पुराने घरों में बड़े लोगों की कचरे वाली झाड़ू से बनती हैं। वास्तव में, बाहामुनी अपने जीवन भर अभावग्रस्त रहती है और दिल्ली तक अपनी बनी चीजें पहुंचाती है। जबकि "कुछ मत कहो", हल जोतने का काम स्त्रियों के हाथों करवाना एक जघन्य अपराध माना जाता है, सजोनी किस्कू कविता में कवित्री ने हल जोतने के अपराध के रूप में सजोनी किस्कू को सहना पड़ा, वह कहती है कि जब तुमने हल चलाया था, तब डोल उठा था बस्ती के माँजी थान में बैठे देवता का सिंहासन और गिर गया था। पुश्तैनी प्रधान की कुर्सी पर बैठे मगजहीन "माँझी हाड़ाम की पगड़ी", जो बस्ती की नाक बचाने के लिए बैल बनाकर हल में जोता था", तुम्हें खूँटे में बांधकर जालिमों ने खिलाया था, परन्तु संथाल विद्रोह के समय घर के पुरुषों ने सारा घर–बार स्त्रियों के ऊपर छोड़ दिया था, तो उन सम्भ्रांत पुरुषों को अकड़ किसने दी? उस समय न पगड़ी गिरी और न किसी की नाक कटी और तो पुरुषों को अपने हक की बात भी नहीं करनी चाहिए। निर्मला पुतुल ने कहा कि आपके पिता की संपत्ति पर कोई अधिकार नहीं है। धनुष आपके हाथ में नहीं लगता, तुम्हारे खिलाफ हर पुरुष प्रतिरूप है। यही कारण है कि वे कहती हैं, "इन गूँगे बहरों की बस्ती में/किसे पुकार रही हो सजोनी किस्कू? तुम गुहार कहाँ लगा रहे हो? यहाँ जाहरे और मॉझीथान के देवता भी बोतल भर दारु में बेचे जाते हैं। स्त्री कार्यकर्ता को हमेशा पुरुषों की तुलना में अपेक्षाकृत कम बताया गया है। इसलिए वह काम करती दिखती है और सुस्ती से संघर्ष करती है स पहाड़ों पर रहने वाली स्त्रियों का कठिन और कठिन जीवन भी बदनाम होता है। वह सिर पर सूखी लकड़ियाँ लेकर कठोर पहाड़ों से उतरती है और बाजार जाती है, जहां वह घर भर की भूख मिटाने के लिए कुछ उपाय खोजती है, बच्चे पीठ पर लटकाकर धान रोपती है। वह पहाड़ों से परेशान होकर भी खुशी खुशी खेती करती है। चटाई बुनेगी, झाड़ु बनाएगी, पहाड़ों, बंदिशों और वर्जनाओं को तोड़ेगी।

निर्मला पुतुल ने अपनी कविताओं में काम करने वाली स्त्री की अस्मिता का मुद्दा उठाया है। वे आदिवासी लड़कियों को अखबार बेचने वाली और गजरा बेचने वाली लड़कियों के रूप में भी दिखाते हैं। वे अपनी कविता की भाषा में अपनी जीवनगत विडम्बनाओं को उजागर करती हैं और कहती हैं कि सुंदरता बेचने वाली इस सुन्दर स्त्री के सपनों में कई गजरे वाली स्त्रियाँ आती हैं और इसका उपहास करती हैं और गुम हो जाती हैं। बाद में, गजरों में पिरोए फूल उसके सीने में काँटे की तरह चुभते हैं। इतना ही नहीं, 'अखबार बेचती लड़की' कविता में उसके समान लड़कियों की तस्वीर को खोजने वाले लोग भी मिलेंगे, इसलिए वह अखबार नहीं बेच रही है, बल्कि खुद को बेच रही है। कवयित्री ने व्यंग्यपूर्ण ढंग से कहा कि वह अपनी आवाज रोटी के लिए नहीं बल्कि अखबार के लिए बेच रही है। वह सबकी आँखों का भद्दा मजाक बनना चाहिए, स्त्रियों के साथ बलात्कार और गैंगरेप होने का कारण, यही भद्दा मजाक है। तेजाब फेंक दुष्कर्म, छेड़खानी जैसी घटनाएँ महिलाओं की अस्मिता को तार–तार करती हैं। इस बलात्कार की हैवानियत का मौन विरोध करने के लिए समाज अधिक से अधिक कतारबद्ध हो जाएगा, यही कारण है कि वह रणचंडी बनकर राक्षसों को मार डालेगी, वह कहती है कि अब रणचंडी बनना होगा, दुर्गा बनना होगा, फूलों का भानो बनना होगा, हाथों में भाला, फरसा, कुल्हाड़ी रखना होगा और इन राक्षसों को खुलेआम मार डालना होगा, इसलिए आज की महिलाएं अपना इतिहास खुद लिखने को तैयार हैंस वे विद्रोह का झंडा उठाकर खड़ी हो जाती हैं, अपनी कमजोरियों को अपना हथियार बनाती हैस वह अपने नाम को इतिहास के पन्नों में नहीं देखकर दुखी नहीं होती, बल्कि स्वयं इतिहास रचने में लगी रहती हैं। यही कारण है कि वे कहती हैं कि हम अपना इतिहास खून से लिखेंगे, हम झंडों की तरह आँचल नहीं लहराएँगे, जुल्फों की तरह बरसने देंगे, न ही हमारी चूड़ियों की खनखनाहट से विद्रोह का बिगुल थमने देंगे। वह अपने विद्रोह में अकेले नहीं है; वह अपने सहगामी का भी साथ चाहती है क्योंकि बिना उसके वह समाज की बुनियादी बुनियादों को तोड़ने में असमर्थ होगी, "और तुम बाँसुरी बजाते रहे" एक ऐसी कविता है जहाँ स्त्री की अस्मिता 'स्व' से हटकर 'पर" पर आ गई है। वह मानो बाँसुरी बजाने वाले से विरोध चाहती है, वह बाँसुरी बजाने में इतना निमग्न था कि कोई आकर कुछ ले जाए, चाहे आग हो या जुलूस का शोर हो, लेकिन वह बाँसुरी बजाते रह गया स इस स्थिति को देखते हुए, एक आदिवासी महिला विद्रोह करती है और कहती है, "इस बार मैं चुप नहीं रहूँगी, छीनकर तोड़ दूँगी तुम्हारी बाँसुरी, कि देखो कि इस बार वो मुझे उठाने आ रहे हैं, यदि कोई भी इस पर प्रतिक्रिया नहीं देता तो

उसका अस्तित्व समाप्त हो जाएगा। यह प्रतिक्रिया सुनकर वह बहुत चीखेगी; उसकी चीख और विद्रोह इतनी शक्तिशाली होगी कि उसे मारने वाला पत्थर चकनाचूर हो जाएगा, पुतुल जी ने अपनी प्रतिक्रिया में बल देते हुए कहा कि चाहे कितनी भी बाधाएँ आए, वह विद्रोह करना नहीं छोड़ेगी इसलिए वह कहती है, "जितनी बूँदें लहू की धरती पर गिरेंगी, उतनी ही निर्मला पुतुल जन्म लेगी, पुतुल ने हवा में मुट्ठी बँधे हाथ लहराते हुए अपनी कविता में आदिवासी स्त्री की अस्मिता को व्यापक रूप से व्यक्त किया है। उनकी कविता आज की तथाकथित आधुनिकता का व्यापक चित्रण करती है, उमाशंकर चौधरी ने कहा कि जब हम इसे भूमण्डलीकरण और पश्चिमीकरण की चकाचौंध से देखते हैं, जहाँ एक तरफ इतनी रोशनी है, बड़े–बड़े मॉल्स हैं और पूरी एक चमकदार दुनिया है, वहीं दूसरी ओर सिर्फ अपनी देह के साथ संघर्ष करती एक आदिवासी स्त्री हैस अरुण कमल कहते हैं, "आदिवासी जीवन, खासकर महिलाओं का सुख–दुःख अपनी पूरी गरिमा और ऐश्वर्य के साथ यहाँ व्यक्त हुआ है।" निर्मला जी की कविताएँ वास्तविकता में स्त्री भावनाओं को व्यक्त करती हैं।

अध्ययन का उद्देश्य

यह अध्ययन इन दोनों संग्रहों के माध्यम से आदिवासी महिलाओं की अस्मिता की कहानी बताना चाहती है। इसमें भारतीय स्त्रियों का शोषण वास्तव में दिखाया गया है। जैसे–जैसे आदिवासी समुदाय की हालत बदतर होती जाती है, उसी समुदाय की स्त्रियाँ अपनी चतुर्दिक शोषण की कहानी कहती हैं, इस अध्ययन ने आदिवासी समाज की महिलाओं का दर्द बयां किया है। इसमें एक स्त्री के बलात्कार के शिकार होने से लेकर घर की चारदिवारी में कैद होने तक की कहानी बताई गई है। वह भी बिकने को विवश है, वह अपने मूल को खोजती नजर आती है। वह बुरी आदतों से दूर रहती है और हल चलाने से लेकर धनुष चलाने तक के काम को निपुणता से करती है, लेकिन इसके लिए उसे कठिन परिस्थितियों से गुजरना पड़ता है सवह पराजय को नहीं मानती, इसलिए वह रणचंडी बन जाती है और असुरों को मार डालने से बचती है। उसके इस रूप को व्यक्त करने से पुरुष समाज की निकृष्टता पर सवाल उठाया गया है। इन काव्यकृतियों के माध्यम से भी आदिवासी समाज की गहराई तक पहुँचने की कोशिश की गई है, जो उनके जीवन के संघर्षों को उजागर करती हैं।

निर्मला पुतुल की कविताओं में स्त्री

आदिवासी स्त्री के बारे में आम धारणा है कि वह साहसी, कर्मठ, और स्वतंत्र है। उन्हें गैर आदिवासी और दलित महिलाओं की तुलना में पितृसत्ता से कम स्वतंत्रता मिलती है। फिर भी वे स्त्री होने के कारण उत्पीड़ित होती हैं। ऐसे में निर्मला पुतुल आदिवासी महिलाओं को पूरी तरह से स्वतंत्र मानने वाली गैरआदिवासी समाज की कल्पना को चुनौती देती हैं। "घर की परिधि से बाहर दूर क्षितिज तक फैली होती है, आदिवासी स्त्रियों की दुनिया," निर्मला पुतुल ने एक लेख में लिखा है। जहाँ दुःख का पहाड़ है महान शांति जैसे वनस्पति की वीरानियाँ। निर्मला पुतुल ने अपनी कविताओं में आदिवासी स्त्रियों के इस अनदेखे पक्ष को व्यक्त किया है। उसकी कविताओं का सबसे महत्वपूर्ण हिस्सा आदिवासी स्त्रियों का उनकी पूरी तरह से चित्रण है। उन्होंने अपनी कविताओं में सन्थाली स्त्रियों की वेदना, तड़प और संघर्ष को मार्मिक ढंग से चित्रित किया है। वे भी इस सन्दर्भ में आदिवासी महिलाओं के शोषण को संस्थागत रूप देने वाले आदिवासी संस्कृति के नियमों का विरोध करती हैं। निर्मला पुतुल ने लिखा है, "सन्थाली महिलाओं के लिए कहीं कोई व्यावहारिक व्यवस्था नहीं है आदिवासी प्रथागत नियम में। कुछ मत बोलो वह सजोनी किस्कू नामक कविता लिखती है

"इन गूंगे बहरों की बस्ती में,
सजोनी किस्कू किसे पुकार रही हो?"
कहाँ गुहार लगा रहे हो?
बोतल भर दारू में भी जाहेर,
माँझी थान के देवता बेचे जाते हैं।
(निर्मला पुतुल, नगाड़े की तरह बजते शब्द, पृ. 24)

आदिवासी लोग जाहेर थान और माँझी थान सन्थाल को सबसे पवित्र स्थान मानते हैं। यहाँ उनके पूर्वजों और देवताओं का निवास माना जाता है। हर सन्थाली गाँव में जाहेर और माँझी थान है। यहीं गाँव और उसके निवासियों से जुड़े हर निर्णय बड़े–बुजुर्गों और गाँव के मुखिया की उपस्थिति में किया जाता है। निर्मला पुतुल कहती हैं कि माँझी थान में गलत निर्णय नहीं लिया जा सकता, लेकिन इसमें रहने वाले देवता भी आदिवासी स्त्री की मदद नहीं कर सकते। गाँव के पंचों को पैसे या दारू का लालच देकर निर्दोष स्त्री के खिलाफ भी फैसला लिया जा सकता है। ऐसे में स्त्रियों के हक़ के खिलाफ ही आदिवासी नियम दिखाई देते हैं। उनका कहना है कि स्त्रियों को पराश्रित बनाने के लिए आदिवासी प्रथागत नियम काम करते हैं। "हमारे समाज में महिलाओं को कई काम करने की मनाही है, जैसे छप्पर छाना, हल चलाना, तीर धनुष छूना" (आदिवासी सामाजिक कार्यकर्त्ता बिटिया मुर्मू) यनी स्त्री स्वतंत्र नहीं होगी, इसलिए वह पुरुष की आश्रित बनकर ही रहेगी। इन सब बातों का जिक्र निर्मला पुतुल की कुछ मत कहो सजोनी किस्कू नामक कविता में किया गया है। उस कविता में वे बताती हैं कि हल चलाने वाली एक महिला को बैल बनाकर हल में जोता गया था। नाक–कान काटकर छप्पर छाने की सजा दी गई। धनुष छूने और संपत्ति पर अधिकार माँगने वाली महिलाओं को भी पशुवत व्यवहार किया गया। वह इस सन्दर्भ में आदिवासी समाज की परम्परा में स्त्रियों का स्थान और उनका योगदान भी स्मरण करती हैं।

साहित्यावलोकन

निर्मला पुतुल आदिवासी महिला कवयित्रियों में अपना विशेष महत्त्वपूर्ण स्थान रखती हैं। वे अपनी भावाभिव्यक्ति आदिवासी भाषा में करती हैं जिसे अनुवादित कर हिन्दी के साहित्य संसार को समृद्ध करने का प्रयास किया गया है। उनकी दोनों काव्य–कृतियाँ 'नगाड़े की तरह बजते शब्द' और 'बेघर सपने' आदिवासी स्त्री अस्मिता की कहानी कहती दिखती हैं। 'आदिवासी स्त्री अस्मिता और निर्मला पुतुल की कविताएँ' विषय पर 2023 में कोई शोध आलेख हमारी जानकारी में नहीं है। इस शोध आलेख के पूर्व आरले श्रीकांत लक्ष्मणराव की शोधपरक आलेख 'आदिवासी स्त्री–अस्मिता एवं अस्तित्व के सवाल और निर्मला पुतुल' 2015 में 'अपनी माटी' नामक ई–साहित्यिक पत्रिका में प्रकाशित हो चुकी है किन्तु मेरा यह शोध आलेख विषय वस्तुगत दृष्टि से यदि देखें तो कुछ अलग दिखता है क्योंकि उसमें उन्होंने 'नगाड़े की तरह बजते शब्द' को केन्द्र कर अपनी बात कही है जबकि मेरे इस शोध–आलेख में निर्मला जी की दोनों काव्य–कृतियों को लिया गया है। अतः इस दृष्टि से भी यह शोध–आलेख अपनी नयी उपादेयता सिद्ध करता है।

निष्कर्ष

इस प्रकार कहा जा सकता है कि निर्मला पुतुल की कविताओं में स्त्री अस्मिता विशेषकर आदिवासी स्त्रियों की दुःख–तकलीफ, आशा–निराशा, बोली–बानी, रीति–रिवाज एक साथ अभिव्यक्ति पाते हैं। आदिवासी स्त्रियों को बेचा जाना, उन्हें हल का धनुष न हाथ लगाने का विरोध करती है। वे अपने ही समुदाय की स्त्रियों की विशद अवस्था पर व्यथित होती हैं। वे चटाई बनाने वाली स्त्रियों को जमीन पर बैठा देते हैं और झाड़ू बनाने वाली स्त्रियों

को गंदगी से भरा देते हैं, क्योंकि उनसे बड़े लोगों ने उनके घरों में अपनी गंदगी फेंक देते हैं। यही कारण है कि वह अपना स्वयं का इतिहास लिखने को उद्धत है। वह बार–बार विद्रोह करेगी तथा बार–बार जन्म लेकर रूढ़िवादियों का नाश करने उतरेगी, यही उनकी कामना है। वे नहीं चाहती कि स्त्री के साथ बलात्कार होने पर लोग हाथों में मोमबत्ती लेकर विरोध करे बल्कि बलात्कारियों को कठिन से कठिन सजा दिलवाए। उसका विद्रोह यदि ध्वसंकारी हो तो भी उसे इसकी कोई चिंता नहीं क्योंकि अब वह और अत्याचार नहीं सहेगी। और इस उपेक्षा का डर भी नहीं सहेगी। वह खुलकर विद्रोह करेगी और जरूरत पड़े तो अस्मिता की लड़ाई में अपनी अहम भूमिका निभाएगी।

अंत टिप्पणी

1. पुतुल निर्मला – नगाड़े की तरह बजते शब्द (काव्य–संग्रह), संस्करण – 2005, प्रकाशन – भारतीय ज्ञानपीठ, पृ०–9
2. पुतुल निर्मला – नगाड़े की तरह बजते शब्द (काव्य–संग्रह), संस्करण – 2005, प्रकाशन – भारतीय ज्ञानपीठ, पृ०–10
3. पुतुल निर्मला – नगाड़े की तरह बजते शब्द (काव्य–संग्रह), संस्करण – 2005, प्रकाशन – भारतीय ज्ञानपीठ, पृ०–104
4. पुतुल निर्मला – नगाड़े की तरह बजते शब्द (काव्य–संग्रह), संस्करण – 2005, प्रकाशन भारतीय ज्ञानपीठ, पृ०–51
5. पुतुल निर्मला – नगाड़े की तरह बजते शब्द (काव्य–संग्रह), संस्करण – 2005, प्रकाशन भारतीय ज्ञानपीठ, पृ०–47
6. पुतुल निर्मला – बेघर सपने (काव्य–संग्रह), संस्करण – 2014, प्रकाशन – आधार प्रकाशन, पृ०–12
7. पुतुल निर्मला – बेघर सपने (काव्य–संग्रह), संस्करण – 2014, प्रकाशन – आधार प्रकाशन, पृ०–23
8. पुतुल निर्मला – बेघर सपने (काव्य–संग्रह), संस्करण – 2014, प्रकाशन – आधार प्रकाशन, पृ०–70
9. पुतुल निर्मला – बेघर सपने (काव्य–संग्रह), संस्करण – 2014, प्रकाशन – आधार प्रकाशन, पृ०–30
10. पुतुल निर्मला – बेघर सपने (काव्य–संग्रह), संस्करण – 2014, प्रकाशन – आधार प्रकाशन, पृ०–36
11. पुतुल निर्मला – नगाड़े की तरह बजते शब्द (काव्य–संग्रह), संस्करण – 2005, प्रकाशन भारतीय ज्ञानपीठ, पृ०–8
12. पुतुल निर्मला – नगाड़े की तरह बजते शब्द (काव्य–संग्रह), संस्करण – 2005, प्रकाशन भारतीय ज्ञानपीठ, पृ०–23
13. पुतुल निर्मला – नगाड़े की तरह बजते शब्द (काव्य–संग्रह), संस्करण – 2005, प्रकाशन भारतीय ज्ञानपीठ, पृ०–24
14. पुतुल निर्मला – नगाड़े की तरह बजते शब्द (काव्य–संग्रह), संस्करण – 2005, प्रकाशन भारतीय ज्ञानपीठ, पृ०–36
15. पुतुल निर्मला – नगाड़े की तरह बजते शब्द (काव्य–संग्रह), संस्करण – 2005, प्रकाशन भारतीय ज्ञानपीठ, पृ०–33
16. पुतुल निर्मला – बेघर सपने (काव्य–संग्रह), संस्करण – 2014, प्रकाशन – आधार प्रकाशन, पृ०–88
17. पुतुल निर्मला – बेघर सपने (काव्य–संग्रह), संस्करण – 2014, प्रकाशन – आधार प्रकाशन, पृ०–74
18. पुतुल निर्मला – बेघर सपने (काव्य–संग्रह), संस्करण – 2014, प्रकाशन – आधार प्रकाशन, पृ०–21
19. पुतुल निर्मला – बेघर सपने (काव्य–संग्रह), संस्करण – 2014, प्रकाशन – आधार प्रकाशन, पृ०–91
20. पुतुल निर्मला – बेघर सपने (काव्य–संग्रह), संस्करण – 2014, प्रकाशन – आधार प्रकाशन, फ्लैप पृष्ठ से
21. पुतुल निर्मला – नगाड़े की तरह बज्जते शब्द (काव्य–संग्रह), संस्करण – 2005, प्रकाशन –पृ०–82
22. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी, दस्तावेज़, अंक 13–15, पृ. 167)
23. (रमणिका गुप्ता, युद्धरत आम आदमी, पूर्णांक–80, पृ.91)

संदर्भ सूचि

1. कुमारदो॰ अभिमन्यु। (2023)। "हिंदी आत्मकथाओं में अस्मिता–बोध।" उन्नत अकादमिक अध्ययन के अंतर्राष्ट्रीय जर्नल, व्यापक प्रकाशन, 5(1), 32–34।
2. कुमारी डॉ. अर्जन। (2023)। "भारतीय समाज और स्त्री–अस्मिता।" कला, मानविकी और सामाजिक अध्ययन के अंतर्राष्ट्रीय जर्नल, व्यापक प्रकाशन, 5(1), 95–97।
3. प्रेमलता उपाध्याय स्नेह, और –, डॉ अनीता नायक। (2023)। "डॉ. श्याम सुंदर दुबे की कथा साहित्य में आदिवासी जीवन।" इंटरनेशनल जर्नल फॉर मल्टीडिसिप्लिनरी रिसर्च, इंटरनेशनल जर्नल फॉर मल्टीडिसिप्लिनरी रिसर्च (आईजेएफएमआर), 5(3)।
4. अम्बेडकररंजनीश कुमार। (2022)। "'आधी दुनिया' पत्रिका में घिनौना लेखन और स्त्रीवादी सरोकार।" प्रैक्सिस इंटरनेशनल जर्नल ऑफ़ सोशल साइंस एंड लिटरेचर, रिसर्च वॉकर्स, 21–26।
5. सिंहडॉ. रामाश्रय। (2022)। "अस्मिता और स्त्री सचेत का प्रश्न।" प्रैक्सिस इंटरनेशनल जर्नल ऑफ सोशल साइंस एंड लिटरेचर, रिसर्च वॉकर्स, 16–21।
6. जाधवविनोद विठ्ठलराव। (2021)। "आदिवासी स्त्री जीवन।" इंटरडिसिप्लिनरी स्टडीज के लिए स्कॉलरली रिसर्च जर्नल, स्कॉलरली रिसर्च जर्नल, 8(65), 15095–15099।
7. जी. (2021). "अरुणकमल की तरह अंतरराष्ट्रीय रूप से भिन्न।" इंटरनेशनल जर्नल ऑफ लिंग्विस्टिक्स एंड कम्प्यूटेशनल एप्लीकेशन, इनोवेटिव रिसर्च डेवलपर्स एंड पब्लिशर्स, 8(3), 22–26।
8. सिंहप्रशांत कुमार। (2017)। "स्त्री शिक्षा की झलकः एक समाजशास्त्रीय मूल्यांकन।" विचार, श्री जय नारायण पी.जी. कॉलेज, लखनऊ, 10(01)।
9. सोनोन। गुणवंत। (2017)। "भारत की आदिवासी महिलाएं एवं वर्तमान चुनौतियाँ।" इंटरडिसिप्लिनरी स्टडीज के लिए स्कॉलरली रिसर्च जर्नल, स्कॉलरली रिसर्च जर्नल, 4(36)।
10. गुलेरिया, जे.एस. (2019)। "काँगड़ा की लोकगाथाओं में स्त्री शोषण व प्रतिकार के स्वर।" स्वर सिंधु, प्रतिभा स्पंदन, 7(2), 47–52।